Research Paper Hindi

स्त्री विमर्श का सशक्त दस्तावेज : शृंखला की कड़ियाँ

Mrs NEELAM

ABSTRACT

महादेवी वर्मा रचित निबंध संग्रह 'शृंखला की कड़ियाँ' का प्रकाशन स्त्रीवादी चिंतन के इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है । इस निबंध संग्रह के माध्यम में महादेवी वर्मा एक स्त्रीवादी दार्शनिक के रूप में हमारे सामने आती है । ये निबंध महादेवी वर्मा की अपने समय व समाज के प्रति जागरूक और मुखर दृष्टि को ही उजागर नही करते, बल्कि हमें बहुत कुछ सोचने को भी बाध्य करते है। 'शृंखला की कड़ियाँ' में स्त्री के प्रति पुरुष द्वारा निश्चित किए गए उत्तरदायित्वों की बेडियों का खुलासा है, साथ ही साथ महादेवी वर्मा द्वारा सुझाए गए एक स्वस्थ समाज के लिए आधुनिक नारी के क्या कर्तव्य हैं, उसका भी संकेत है । इस प्रकार इस विमर्श का महत्व केवल ऐतिहासिक ही न होकर आज भी प्रासंगिक है ।

KEYWORDS : महादेवी वर्मा, स्त्री विमर्श, निबंध, 'शृंखला की कड़ियाँ'

स्त्री विमर्श का सशक्त दस्तावेज : 'शृंखला की कड़ियाँ'

महादेवी वर्मा छायावाद की प्रतिष्ठित कवयित्री होने के साथ-साथ सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में स्वतंत्रता आंदोलन और सुधारवादी आंदोलन की एक कड़ी भी थी । अपने जीवन की अनुभूतियों को उन्होंने अपनी कृतियों में स्पष्ट और बेबाक होकर उँड़ेला है । उनके साहित्य की कविता , संस्मरण , रेखाचित्र और निबंध आदि सभी विधाओं मे कहीं न कहीं स्त्री को एक स्वस्थ रूप देने के उनके व्यापक दृष्टिकोण का पता चलता है । विशेषकर 'चाँद' पत्रिका में सम्पादकीय के रूप में प्रकाशित उनके ग्यारह निबंध (1931-1937) ; तत्पश्चात 1942 में यही निबंध 'शृंखला की कड़ियाँ' के नाम से निबंध -संग्रह के रूप में आया तो स्त्री जीवन को अर्थ प्रदान करने के रूप में दस्तावेज़ बन गया । आश्चर्य का विषय है कि, आमतौर पर महादेवी वर्मा को छायावाद की कवयित्री के रूप में ही देखा और समझा जाता है । आज हिंदी के अधिकांश विद्यार्थी महादेवी को सिर्फ़ कवयित्री या बहुत हुआ तो संस्मरणकार के रूप में जानते हैं । स्त्री-पक्ष पर महादेवी वर्मा के निबंध जो 'शृंखला की कड़ियाँ' संकलन में संकलित है, उन पर हिंदी के सुधी आलोचकों ने काफी कम लिखा है । यह सचमुच एक दु:खद विड़ंबना है, और विचार का प्रश्न भी ।

'शृंखला की कड़ियाँ' का प्रकाशन हिंदी के स्त्रीवादी चिंतन के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है । जो लोग यह समझते हैं कि स्त्री की स्वाधीनता की विचारधारा सत्तर के दशक में फ्रांस और अमेरिका से भारत में आयी है, उन्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि 'शृंखला की कड़ियाँ' 1942 ईसवी में छपी और उसके अधिकांश निबंध तीस के दशक में प्रसिद्ध पत्रिका 'चाँद' के सम्पादकीय लेखों के रूप में प्रकाशित हुए थे। तब तक सारी दुनिया में नारीवादी सोच और आंदोलन को प्रेरित और प्रभावित करने वाली सिमोन द बोउआ की पुस्तक 'द सेकेंड सेक्स' अस्तित्व में न थी । वह फ्रांसीसी में 1949 ईसवी में छपी और अँग्रेजी में सन 1953 में । उसका कुछ साल पहले "स्त्री उपेक्षिता' नाम से हिंदी अनुवाद प्रकाशित हुआ है ।[1]

ये निबंध महादेवी वर्मा की अपने समय व समाज के प्रति जागरूक और मुखर दृष्टि को ही उजागर नही करते, बल्कि हमें बहुत कुछ सोचने को भी बाध्य करते हैं । 'शृंखला की कड़ियाँ' के माध्यम से वे एक स्त्रीवादी दार्शनिक के रूप में हमारे सामने आती है । हिंदी में स्त्री-जीवन की वास्तविकताओं और कामनाओं का कलात्मक चित्रण करने वाली लेखिकाएं और भी हैं, लेकिन भारतीय स्त्री-जीवन की जटिल समस्याओं , उसकी दासता की दारूण स्थितियों और उसकी मुक्ति की दशाओं का जैसा विवेचन महादेवी वर्मा की पुस्तक 'शृंखला की कड़ियाँ' में है, वैसा हिंदी में अन्यत्र नहीं है । 'शृंखला की कड़ियाँ' का उद्देश्य उस भारतीय नारी की स्थिति का विश्लेषण है जो महादेवी वर्मा के शब्दों में 'जन्म से अभिशप्त और जीवन से संतप्त' है । वे इस निबंध -संग्रह को भारतीय नारी को समर्पित करते हुए लिखती हैं कि-

जन्म से अभिशप्त, जीवन से संतप्त

किंतु

अक्षय वात्सल्य, वरदानमयी

भारतीय नारी को ।[2]

महादेवी वर्मा ने भारतीय स्त्री के जीवन की उन तमाम विषम परिस्थितियों को जो उसे माता-पिता और पति के घर से प्राप्त हैं, उसे अभिशाप और उसकी जैविक विशिष्टताओं को वरदान के रूप में स्वीकार किया है। महादेवी भारतीय नारी की तमाम विषमताओं के पीछे एक दमनकारी इतिहास और परंपरा के कुचक्र का अनुभव करती है। अत: सर्वप्रथम वह इसके इतिहास और कारण की छानबीन करना चाहती है। उनका विश्वास है कि - ''समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर करता है और यह ज्ञान ज्ञाता की अपेक्षा रखता है ।[3] महादेवी वर्मा चाहती है कि स्त्री और पुरूष सबसे पहले अपनी समस्या को जाने क्योंकि समस्या को जाने बिना उसका समाधान खोजना संभव नही है । वे दोनों यदि एक दूसरे को ठीक-ठाक समझ लें तो समाज का स्वरूप सुंदर हो जाता है, अन्यथा उसे कोई दूसरे उपाय से भव्य तथा उपयोगी नही बन पाता । महादेवी उन अनेक संदर्भों की व्याख्या करती है जो स्त्री के जीवन को नरक तुल्य बनाए हुए हैं । स्त्री को सबसे अधिक यातना देने वाला शब्द जो उसके प्रति प्रयोग किया जाता है वह 'पराया धन' अथवा 'परायी' है । इस पराये शब्द को कन्या के संस्कार में पिरो दिया जाता है -''प्रत्येक बालिका उत्पन्न होने के साथ ही अपने आपको ऐसे पराये घर की वस्तु मानने और बनने लगती है जिसमें न जाने की इच्छा करना भी पाप है ।''[4] पिता और पति के घर में वह पराई और एक वस्तु मात्र । इतना ही नही दोनों ही घरों में धन और संपति से वंचित 'पराई' और 'पराधीन' है । नारी के मन और मस्तिष्क में परायापन, पराधीनता, स्वत्वहीनता और खालीपन के कारण जो एक छटपटाहट, निराशा, वेदना है उसे महादेवी की इस कविता में भी महसूस किया जा सकता है–

'विस्तृत नभ का कोई कोना

मेरा न कभी अपना होना

परिचय इतना, इतिहास यही

उमडी कल थी, मिट आज चली ।'

भारतीय समाज में ऐसे लोगों की कमी न पहले थी और न आज है जो भारतीय संस्कृति की दुहाई देकर भारतीय स्त्री को गुलाम बनाए रखना चाहते हैं । ऐसे व्यक्तियों के विचारों की आलोचना करते हुए महादेवी वर्मा कहती हैं कि ''आज जब सारा गतिशील संसार निरंतर परिवर्तन की अनिवार्यता प्रमाणित कर रहा है,

स्त्रियों के जीवन को काट-छांट कर इसी साँचे के बराबर बनाने का प्रयत्न हो रहा है जो प्राचीनतम युग में ढाला गया था ।..... प्राचीनता की दुहाई देकर जीवन को संकीर्णतम बनाते जाना और विकास के मार्ग को चारों ओर से अवरुद्ध कर देना किसी जीवित व्यक्ति पर समाधि बना देने से भी क्रूर और विचारहीन कार्य है ।''[5] महादेवी दूसरे देशों की स्त्रियों की स्वाधीनता का उदाहरण सामने रखकर भारतीय स्त्री की पराधीनता पर क्षोभ व्यक्त करते हुए कहती हैं कि ''पश्चिमी तथा पूर्वी जाग्रत देशों में स्त्रियों ने उन बेडियों को काट डाला है, जिनमें पुरूषों ने बर्बरता के युग में उन्हें बाँधकर अपने स्वामित्व का क्रूर प्रदर्शन किया था । .....जिसकी सभ्यता की प्राचीनता प्रख्यात है, केवल उसी हमारे देश में अब तक इस भावना की ऐसी धुँधली रूपरेखा है कि हजार स्त्रियों में कदाचित एक भी इससे परिचित न होगी ।''[6]

हिंदू समाज-व्यवस्था में स्त्री की कोई स्वतंत्र पहचान नही होती, पुरूष के साथ संबंध से ही उसकी पहचान बनती है । महादेवी इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहती हैं, ''भारतीय पुरूष जिस प्रकार अपने मनोरंजन के लिए रंग -बिरंगे पक्षी पाल लेता है; उपयोग के लिए गाय या घोड़े पाल लेता है, उसी प्रकार वह एक स्त्री को भी पालता है तथा अपने पालित पशु-पक्षियों के समान ही उसके मन और शरीर पर अपना अधिकार समझता है ।''[7] नारी जीवन का प्रथम लक्ष्य पत्नीत्व तथा अंतिम मातृत्व समझा जाता है । विवाह और मातृत्व स्थितियों में उसकी स्वेच्छा पर कोई ध्यान नही दिया जाता । ''इसी पत्नीत्व की अनिवार्यता से विद्रोह करके अनेक सुशिक्षित स्त्रियाँ गृहस्थ जीवन में प्रवेश ही नही करना चाहती, क्योंकि उन्हें भय रहता है कि उनके सहयोगी उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व को एक क्षण भी सहन न कर सकेंगें ।''[8] स्त्री की त्यागमयी और सहनशील प्रकृति का बडा महिमा-गायन होता है । महादेवी 'हमारी 'शृंखला की कड़ियाँ' निबंध में कहती हैं कि यह त्याग और सहनशीलता उसकी प्रकृति, नही संस्कार है जो उसे बलात परवश बनाते है। उसे समझाया जाता है कि उसे अपने अस्तित्व को पुरूष की छाया बना देना चाहिए, अपने व्यक्तित्व को उसमें समाहित कर देना चाहिए । मगर इस विचार को महादेवी 'किसी विषमूलक वृक्ष का विषमय फल ही मानती हैं । क्योंकि यह पराधीनता मात्र भौतिक न रहकर मानसिक भी हो जाती है, और स्त्रियों से स्वतंत्र रूप से सोचने-समझने की शक्ति छीन लेती है ।[9]

महादेवी वर्मा 'घर और बाहर' निबंध में घर और बाहर दोनों प्रकार की स्त्रियों में कोई विशेष अंतर नही समझती । दोनों ही किसी न किसी प्रकार की समस्याओं से ग्रस्त है ''यदि रूढियों का अवलम्ब लेने वाली बहिनें गृहों में अनेक यंत्रणाएँ रो-रोकर सह रही हैं तो बंधनों को तोड़ फेंकने वाली विदुषियाँ बाहर असंख्य अपमानों का अविचल लक्ष्य बनकर उससे भी कठिन अग्नि परीक्षा में उतीर्ण होने की आशा में मिथ्या हँसी हँस रही हैं ।''[10]

महादेवी वर्मा 'युद्ध और नारी' शीर्षक निबंध में वैश्विक फलक पर बात करती हैं, यह निबंध उन्होंने तब लिखा जब दूसरे विश्वयुद्ध की तैयारी हो रही थी । इस निबंध में महादेवी ने युद्ध के विषय में स्त्री की चिंता

व स्थिति का विवेचन किया है । उन्होंने लिखा है कि-''स्त्री पुरुष के दृष्टिकोण से युद्ध को नहीं देख सकती; क्योंकि महाभारत से लेकर आज तक के युद्धों का इतिहास गवाह है कि प्रत्येक युद्ध में स्त्री पुरूष की बर्बरता का शिकार हुई है, उसका शरीर तथा मन रणभूमि की तरह रौंदे गए हैं और वह सामूहिक बलात्कार से लेकर वेश्या बनने तक के लिए मजबूर की जाती रही है ।'' युद्ध में हमेशा मानवाधिकारों का हनन होता है, लेकिन सबसे अधिक स्त्रियों के अस्तित्व, व्यक्तित्व और मानवीय अधिकारों का । दुनिया भर की पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत युद्ध में स्त्री की दो ही भूमिकाएँ रहीं हैं; एक तो सैनिक पैदा करने वाली माता की और दूसरी सैंनिकों की भूख मिटाने वाली वेश्या की ।[11]

महादेवी एक स्वस्थ भारतीय समाज की कल्पना करती हैं । वे विवाह, परिवार, परंपरा, सामाजिक मूल्य आदि को अधिक महत्व देती हैं । इससे परे वह अन्य कोई विकल्प दे ही नही सकती । एक शिक्षित व जागरूक महिला होने के नाते वे मानती है कि स्त्री को शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता, सम्मान, प्रतिष्ठा, व सामाजिक अधिकार आदि जो भी उसका देय है, अवश्य मिलना चाहिए ।

महादेवी मानती हैं कि स्त्री जीवन को संपूर्ण गति प्रदान करने के लिए नारी का शिक्षित होना अति आवश्यक है । वे मानती हैं कि कन्या की शिक्षा-दीक्षा और उसकी सहमति के बाद ही उसका विवाह होना चाहिए । साथ-साथ स्त्रियों से भी उनकी कुछ विशेष अपेक्षाएं हैं । आधुनिक स्त्री से उनकी अपेक्षा है कि वह प्रसाधित -श्रृंगारित स्त्रीत्व मात्र न लेकर खडी रहें । आधुनिक भारतीय स्त्री केवल रमणी या भार्या नही रही , घर के बाहर भी अपनी क्षमता का सदुपयोग कर सकती है । महादेवी वर्मा स्त्री की विशिष्ट नैसर्गिक क्षमताओं के अनुसार ऐसे कार्यक्षेत्रों के बारे में सुझाव भी देती हैं जहाँ स्त्री कार्य कर सकती है । बच्चों की शिक्षा के क्षेत्र में वह न तो पुरूष न अविवाहित युवतियों का समर्थन करती हैं -''हमारे बालकों के लिए कठोर शिक्षक के स्थान पर यदि ऐसी स्त्रियाँ रहे जो स्वयं माताएँ भी हों तो कितने ही बालकों का भविष्य इस प्रकार नष्ट न हो सकेगा । जिस प्रकार आजकल हो रहा है ।''[12] शिक्षा के क्षेत्र के समान चिकित्सा के क्षेत्र में भी स्त्रियों का सहयोग वांछनीय है । महादेवी का तर्क है कि "स्त्री में स्वाभाविक कोमलता पुरूष की अपेक्षा अधिक होती है, साथ ही पुरूष के समान व्यवसाय बुद्धि प्राय: उसमें नही रहती- अत: वह इस कार्य को अधिक सहानूभूति तथा स्नेह के साथ कर सकती है । महादेवी वर्मा ने शिक्षा, चिकित्सा के साथ-साथ कानून के क्षेत्र में स्त्रियों के कार्य की उपयुक्तता को उचित माना है । वास्तव में जबसे स्त्रियाँ घर से बाहर आयी हैं , उनके कार्य का अधिकांश क्षेत्र आज हमें महादेवी वर्मा की विचारधारा के अनुसार ही दिखाई दे रहा है । यह उनकी दूरदर्शिता का ही प्रमाण है।

इस प्रकार स्त्री -प्रश्न पर महादेवी का चिंतन अपने समय और समाज के परिपेक्ष्य में नितांत मौलिक और उनके अपने जीवनानुभवों से उपजा है । महादेवी के ये निबंध सहलाने वाली आनन्ददायक रेशमी भाषा में या रहस्यात्मक प्रतीकों में नही लिखे गये है । इनमें महादेवी आक्रामक तेवर और बेनकाब कर देने स्वरों

में अपनी बात रखती है और स्त्री को एक देवी की मूर्ति के स्थान पर सामान्य हाड-मांस की स्त्री समझे जाने की वकालत करती है । इन निबंधों में महादेवी पुरुषसत्तात्मक समाज में स्त्रियों की सामाजिक - आर्थिक- सांस्कृतिक -पारिवारिक गुलामी और उसके कारणों का संतुलित विश्लेषण प्रस्तुत करती है, स्त्री की स्वतंत्र अस्मिता और पहचान के प्रश्न को और उसकी सामाजिक चेतना के विस्तार की आवश्यकता को रेखांकित करती है, सामाजिक रूढियों से मुक्ति के संघर्ष के जटिल पक्षों को उद्घाटित करती हैं तथा स्त्रियों की आर्थिक स्वावलंबिता की अनिवार्यता पर बल देती है। [13]

सन्दर्भ ग्रंथ सूची-

1. इन्द्रप्रस्थ भारती, अंक (अक्तूबर-दिसम्बर 2006), पृ.11, प्रकाशक -हिंदी अकादमी ,दिल्ली ।

2, 'शृंखला की कड़ियाँ', महादेवी वर्मा, पृ.1, प्रकाशक -राधाकृष्ण प्राइवेट लिमिटेड , नई दिल्ली ।

3 'शृंखला की कड़ियाँ', महादेवी वर्मा, अपनी बात, प्रकाशक -राधाकृष्ण प्राइवेट लिमिटेड , नई दिल्ली ।

4. वही, पृ.127, ।

5. वही, पृ.20 ।

6. वही, पृ.19 ।

7. इन्द्रप्रस्थ भारती, अंक (अक्तूबर-दिसम्बर 2006), पृ.15 ,प्रकाशक हिंदी अकादमी, दिल्ली ।

8. वही, पृ.71 ।

9. निबंधों की दुनिया; महादेवी वर्मा, संपादक-निर्मला जैन, कुसुम बांठिया, पृ.10-11, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

10. वही, पृ.71 ।

11. वही, पृ.19-20 ।

12. 'शृंखला की कड़ियाँ', महादेवी वर्मा, पृ.67, प्रकाशक राधाकृष्ण प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली ।

13. इन्द्रप्रस्थ भारती,(अंक अक्तूबर-दिसम्बर) पृ.75-76, प्रकाशक हिंदी अकादमी, दिल्ली ।